

दरगाह कमेटी, अजमेर

बनाम

राजस्थान राज्य

(पी.बी. गजेंद्रगढ़कर, के.एन. वांचू, के.सी. दास गुप्ता और टी.एल. वेंकटराम अय्यर,
न्यायमूर्तिगण)

*नगर पालिका - समिति द्वारा कर के रूप में वसूली जाने वाली मरम्मत के लिए की गई
लागत - आवेदन का मनोरंजन करने वाले मजिस्ट्रेट - यदि एक अवर आपराधिक न्यायालय -
अजमेर - मेरवाड़ा नगर पालिका विनियमन, नियम 925 (नियम 925 का विनियमन VI), धारा
222 (4), 234।*

अपनी संपत्ति की कुछ मरम्मत करने के लिए नगर पालिका द्वारा की गई मांग को पूरा करने में अपीलकर्ता की विफलता पर नगर पालिका ने उचित नोटिस देने के बाद उक्त मरम्मत की, जिसकी लागत अपीलकर्ता से धारा 222 (4) के तहत कर के रूप में वसूली योग्य हो गई। अजमेर मेरवाड़ा नगर पालिका विनियमन। नगर पालिका ने उनके द्वारा खर्च की गई लागत की राशि की वसूली के लिए अतिरिक्त तहसीलदार और मजिस्ट्रेट, द्वितीय श्रेणी, अजमेर को विनियमन की धारा 234 के तहत आवेदन किया और मजिस्ट्रेट ने अपीलकर्ता को बकाया राशि का भुगतान करने के लिए एक आदेश पारित किया। इस आदेश के विरुद्ध अपीलकर्ता ने सत्र न्यायाधीश की अदालत में आपराधिक पुनरीक्षण आवेदन प्रस्तुत किया जिसे खारिज कर दिया गया क्योंकि पुनरीक्षण में हस्तक्षेप करने का कोई आधार नहीं था। इसके बाद अपीलकर्ता ने अपने पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार में उच्च न्यायालय का रुख किया, जहां उत्तरदाताओं ने प्रारंभिक आपत्ति उठाई कि अपीलकर्ता द्वारा दायर आपराधिक पुनरीक्षण आवेदन अक्षम था क्योंकि जिस मजिस्ट्रेट ने धारा 234 के तहत प्रत्यर्थी नंबर 2 नगरपालिका समिति के आवेदन पर विचार किया था, वह धारा 439 के तहत एक अवर आपराधिक अदालत नहीं थी। आपराधिक प्रक्रिया संहिता के अनुसार, उक्त आपत्ति को बरकरार रखा गया और आपराधिक पुनरीक्षण आवेदन उस आधार पर खारिज कर दिया गया।

सवाल यह था कि क्या जिस मजिस्ट्रेट ने नियमन की धारा 234 के तहत नगर पालिका द्वारा उसके समक्ष किए गए आवेदन पर विचार किया था, वह दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 439 के तहत एक अवर आपराधिक न्यायालय था, और यह भी कि क्या धारा 234 के तहत कोई

आवेदन तब तक नहीं किया जा सकता था जब तक कि नियम बनाए गए और धारा 222 के तहत मांग करने के लिए नोटिस के प्रपत्र निर्धारित किए गए।

अभिनिर्धारित किया, कि अजमेर मेरवाड़ा नगर पालिका विनियमन की धारा 234 के तहत एक मजिस्ट्रेट के समक्ष शुरू की गई कार्यवाही केवल वसूली कार्यवाही की प्रकृति में थी और उक्त कार्यवाही में कोई अन्य प्रश्न नहीं उठाया जा सकता था। धारा 234 द्वारा विचारित जांच की प्रकृति बहुत सीमित थी; प्रथम दृष्टया यह न्यायिक जांच के बजाय मंत्रिस्तरीय जांच के चरित्र का हिस्सा था और इसे अधिक से अधिक एक नागरिक प्रकृति की कार्यवाही के रूप में माना जा सकता था, लेकिन आपराधिक कार्यवाही के रूप में नहीं और जिस मजिस्ट्रेट ने आवेदन पर विचार किया वह कोई अवर आपराधिक न्यायालय नहीं था।

कार्यवाही का चरित्र चाहे कुछ भी हो, चाहे वह पूरी तरह से मंत्रिस्तरीय या न्यायिक या अर्ध-न्यायिक हो, जिस मजिस्ट्रेट ने आवेदन पर विचार किया और जांच की, उसने ऐसा इसलिए किया क्योंकि उसे इस संबंध में नामित किया गया था और इसलिए उसे एक नामित व्यक्ति के रूप में माना जाना चाहिए। न कि एक मजिस्ट्रेट के रूप में कार्य करना और दंड प्रक्रिया संहिता के तहत अपने अधिकार का प्रयोग करना। इसलिए उसे अवर आपराधिक न्यायालय नहीं माना जा सकता।

इसके अलावा, अभिनिर्धारित किया गया कि यदि नियमों को विनियमन की धारा 234 के अनुसार निर्धारित नहीं किया गया था, तो केवल यही कहा जा सकता है कि मांग नोटिस जारी करने के लिए कोई फॉर्म निर्धारित नहीं था, इसका मतलब यह नहीं था कि समिति को वैधानिक शक्ति प्रदान की गई थी। धारा 222(1) के अनुसार मांग करना अप्रवर्तनीय था और धारा 222(1) के आधार पर जो राशि दावा करने योग्य थी, वह सिर्फ इसलिए दावायोग्य नहीं रह गई क्योंकि उक्त मांग करने के लिए फॉर्म निर्धारित करने वाले नियम नहीं बनाए गए थे।

क्राउन थ्रू म्युनिसिपल कमेटी, अजमेर बनाम अम्बा लाल, अजमेर-मेरवाड़ा लॉ जर्नल, खंड V, 92, रे दीनबाई जीजीभाई खंबाटा, (1919) आईएल आर 43 बॉम्बे। 864, वी बी डी'मोंटे बनाम बेंड'ए बरो नगर पालिका, आई एल आर 1950 बॉम्बे । 522, सम्माट बनाम देवप्पा रामप्पा, (1918) 43 बॉम्बे । 607, रे दलसुखराम हुर्गोवनदास, (1907) 6 सीआर एल जे 425 और म्युनिसिपल कमेटी, लश्कर बनाम शाहबुद्दीन, एआईआर 1952 एमबी 48, संदर्भित।

आपराधिक अपीलीय क्षेत्राधिकार: 1959 की आपराधिक अपील संख्या 162।

डीबी क्रिमिनल रिवीजन नंबर 47, 1957 में राजस्थान उच्च न्यायालय के 13 जनवरी, 1959 के फैसले और आदेश से विशेष अनुमति द्वारा अपील।

अपीलकर्ता की ओर से *एन सी चटर्जी, जे एल दत्ता और सी पी लाल।*

मुकट बिहारी लाल भार्गव और नौनीत लाल, प्रत्यर्थी नंबर 2।

1961. 24 अप्रैल. न्यायालय का निर्णय सुनाया गया

गजेंद्रगड़कर, न्यायाधीश .-13 जून 1950 को, नगरपालिका समिति, अजमेर, प्रत्यर्थी 2, ने अपीलकर्ता, दरगाह समिति, अजमेर के खिलाफ धारा के तहत एक नोटिस जारी किया। अजमेर-मेरवाड़ा नगर पालिका विनियमन, 1925 (1925 का VI) (इसके बाद इसे विनियमन कहा जाएगा) के 153 में झालरा दीवार में कुछ मरम्मत करने का आह्वान किया गया जो कि जीर्ण-शीर्ण स्थिति में थी। अपीलकर्ता ने उक्त मांग का अनुपालन नहीं किया और इसलिए प्रत्यर्थी 2 ने विनियम की धारा 220 के तहत अपीलकर्ता को एक और नोटिस दिया, जिसमें उसे सूचित किया गया कि आवश्यक मरम्मत प्रत्यर्थी 2 के खर्च पर की जाएगी और इसके द्वारा होने वाली लागत होगी। अपीलकर्ता से बरामद किया गया। यह नोटिस 3 जुलाई 1950 को दिया गया था। फिर भी अपीलकर्ता ने मरम्मत के लिए कोई कदम नहीं उठाया और इसलिए प्रत्यर्थी 2 ने अपने खर्च पर मरम्मत कार्य करवाया, जिसकी राशि 17,414 रुपये थी। विनियम की धारा 222(4) के तहत यह राशि अपीलकर्ता से कर के रूप में वसूली योग्य हो गई। इस संबंध में अपीलकर्ता को 1 अप्रैल, 1952 को एक मांग नोटिस जारी किया गया था, और उक्त नोटिस के अनुसरण में प्रत्यर्थी 2 ने विनियमन की धारा 234 के तहत उक्त राशि की वसूली के लिए अतिरिक्त तहसीलदार और मजिस्ट्रेट द्वितीय श्रेणी, अजमेर को आवेदन किया था।

विद्वान मजिस्ट्रेट के समक्ष कार्यवाही में अपीलकर्ता ने कुछ दलीलें उठाईं। इन दलीलों को खारिज कर दिया गया और अपीलकर्ता को 30 अगस्त, 1956 तक बकाया राशि का भुगतान करने के लिए एक आदेश पारित किया गया। इस आदेश के खिलाफ अपीलकर्ता ने सत्र न्यायाधीश, अजमेर की अदालत में एक आपराधिक पुनरीक्षण आवेदन दायर किया। विद्वान सत्र न्यायाधीश ने अपीलकर्ता द्वारा उठाए गए तर्कों पर विचार किया और अभिनिर्धारित किया कि मजिस्ट्रेट द्वारा लिया गया दृष्टिकोण गलत नहीं कहा जा सकता है और इसलिए पुनरीक्षण में हस्तक्षेप करने का कोई आधार नहीं है। अपने पुनरीक्षण आवेदन के खारिज होने से व्यथित महसूस करते हुए अपीलकर्ता ने अपने पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार में राजस्थान उच्च न्यायालय का रुख किया। उच्च न्यायालय के समक्ष, प्रत्यर्थी 1, राजस्थान राज्य प्रत्यर्थी 2 की ओर से, एक प्रारंभिक आपत्ति

उठाई गई थी कि अपीलकर्ता द्वारा दायर आपराधिक पुनरीक्षण आवेदन अक्षम था क्योंकि जिस मजिस्ट्रेट ने धारा 234 के तहत प्रत्यर्थी 2 का धारा 234 के तहत किया गया आवेदन दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 439 के तहत एक अवर आपराधिक न्यायालय नहीं था। इस प्रारंभिक आपत्ति को उच्च न्यायालय ने बरकरार रखा और आपराधिक पुनरीक्षण आवेदन उस आधार पर खारिज कर दिया। इस आदेश के विरुद्ध अपीलकर्ता विशेष अनुमति से इस न्यायालय में आया है; और अपील हमारे निर्णय के लिए जो संक्षिप्त प्रश्न उठाती है वह यह है कि क्या जिस मजिस्ट्रेट ने धारा 234 के तहत प्रत्यर्थी 2 द्वारा उसके समक्ष दिए गए आवेदन पर विचार किया था, वह दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 439 के तहत एक अवर आपराधिक न्यायालय था।

इस बिंदु से निपटने से पहले विनियमन के भौतिक प्रावधानों की योजना का संदर्भ लेना प्रासंगिक है। धारा 153 नगर पालिका को उन इमारतों को हटाने या मरम्मत का आदेश देने की शक्ति प्रदान करती है जो खतरनाक स्थिति में पाई जा सकती हैं। इस धारा के तहत समिति नोटिस देकर इमारत, दीवार या संरचना के मालिक से इसे तुरंत हटाने या ऐसी मरम्मत कराने की मांग कर सकती है जिसे समिति सार्वजनिक सुरक्षा के लिए आवश्यक समझे। यह धारा समिति को मालिक के खर्च पर कोई भी कदम उठाने का अधिकार देती है जो वह आसन्न खतरे को टालने के उद्देश्य से आवश्यक समझती है। यदि मालिक, जिसे धारा 153 के तहत नोटिस दिया गया है, मांग का अनुपालन करता है तो और कुछ करने की आवश्यकता नहीं है। हालाँकि, यदि मालिक उसे दी गई मांग का अनुपालन नहीं करता है, तो समिति को धारा 220 के तहत मालिक को छह घंटे के नोटिस के बाद मरम्मत करने का अधिकार है। यह धारा प्रावधान करती है कि जब भी इस विनियम के तहत जारी किए गए किसी नोटिस की शर्तों का अनुपालन नहीं किया जाता है, तो समिति छह घंटे के नोटिस के बाद अपने अधिकारियों से यह कार्य करवा सकती है। इस प्रावधान के परिणाम के रूप में, और वास्तव में इसके परिणाम के रूप में, धारा 222 समिति को धारा 220 के तहत किए गए कार्य की लागत वसूल करने का अधिकार देता है। धारा 222(1) समिति 1961 को चूककर्ता व्यक्ति से कार्य की लागत वसूलने के लिए अधिकृत करती है। धारा 222 की उप धाराएं (2) और (3) इस सवाल से निपटती हैं कि किस व्यक्ति को चूककर्ता माना जाना चाहिए, मालिक या कब्जाधारी; वर्तमान अपील में इस प्रश्न से हमारा कोई सरोकार नहीं है। धारा 222 की उप-धारा (4) में प्रावधान है कि जहां इस धारा के तहत समिति द्वारा वसूली योग्य कोई भी धनराशि संपत्ति के मालिक द्वारा देय है, तो उस पर शुल्क लगाया जाएगा और वसूली योग्य होगी जैसे कि यह समिति द्वारा संपत्ति पर लगाया गया कर हो। उपधारा (5) द्वारा यह प्रावधान किया गया है कि मालिक और अधिभोगी के बीच का अनुबंध इस धारा से प्रभावित

नहीं होता है। यह धारा 222(4) के तहत है कि प्रत्यर्थी 2 द्वारा अपीलकर्ता को एक मांग नोटिस दिया गया था। यह हमें धारा 234 पर ले जाता है जो नगरपालिका दावों की वसूली की मशीनरी प्रदान करता है। यह धारा अन्य बातों के साथ-साथ प्रावधान करती है कि इस विनियमन के तहत किसी समिति द्वारा दावा योग्य या वसूली योग्य कोई भी कर, नियम द्वारा निर्धारित तरीके से मांग किए जाने के बाद, नगर पालिका की सीमा के भीतर या क्षेत्राधिकार वाले मजिस्ट्रेट के समक्ष आवेदन पर वसूल किया जाएगा। कोई अन्य स्थान जहां वह व्यक्ति जिसके द्वारा राशि देय है, उस समय निवास कर सकता है, ऐसे व्यक्ति से संबंधित मजिस्ट्रेट के अधिकार क्षेत्र की सीमा के भीतर किसी भी चल संपत्ति की परेशानी और बिक्री से। इस धारा का प्रावधान यह निर्धारित करता है कि इस धारा की कोई भी बात प्रतिबद्धता को नहीं रोकेगी। किसी भी सक्षम सिविल न्यायालय में देय राशि के लिए मुकदमा करने से अपने विवेक पर रोक लगाएं। इस प्रकार यह देखा जाएगा कि मजिस्ट्रेट को आवेदन करने का उद्देश्य मजिस्ट्रेट से एक आदेश प्राप्त करना है जिसमें दावा योग्य या संकट से वसूली योग्य कर की वसूली और डिफॉल्टर से संबंधित किसी भी चल संपत्ति की बिक्री का निर्देश दिया गया है। यह इस धारा के तहत है कि मजिस्ट्रेट को प्रत्यर्थी 2 द्वारा स्थानांतरित किया गया था। यह संक्षेप में विनियमन के भौतिक प्रावधानों की योजना है।

अपीलकर्ता के लिए श्री चटर्जी ने जो मुख्य तर्क हमारे सामने रखा है, वह यह है कि धारा 234 के तहत कार्यवाही की प्रकृति और उक्त धारा के तहत किए गए आवेदन पर विचार करने वाले मजिस्ट्रेट के चरित्र का निर्धारण करते समय, इसे ध्यान में रखना महत्वपूर्ण है। अपीलकर्ता की स्थिति में किसी व्यक्ति के पास नोटिस की वैधता के साथ-साथ समिति द्वारा उसके खिलाफ किए गए दावे की वैधता को चुनौती देने का कोई अन्य अवसर नहीं है। तर्क यह है कि मालिक यह तर्क देने के लिए खुला होगा कि धारा 153 के तहत जारी किया गया नोटिस अमान्य या तुच्छ है। उसे यह तर्क देने की भी छूट होगी कि उससे जो राशि वसूलने की मांग की गई है वह अत्यधिक है और यदि मरम्मत की भी गई होती तो उसकी लागत उतनी नहीं होती, और चूंकि विनियमन की योजना से पता चलता है कि यह कोई अवसर प्रदान नहीं करता है धारा 234 के तहत कार्यवाही को छोड़कर उन विवादों को उठाने के लिए मालिक को कार्यवाही की प्रकृति और उनका मनोरंजन करने वाले मजिस्ट्रेट के चरित्र को उदारतापूर्वक समझा जाना चाहिए। कार्यवाही को न्यायिक कार्यवाही अभिनिर्धारित किया जाना चाहिए और जब मजिस्ट्रेट उक्त कार्यवाही पर विचार करता है तो उसे एक अवर आपराधिक न्यायालय माना जाना चाहिए।

यदि यह धारणा जिसके आधार पर तर्क आगे बढ़ता है कि विनियमन मालिक को नोटिस को चुनौती देने या उससे दावा की गई राशि पर सवाल उठाने का कोई अन्य अवसर प्रदान नहीं करता है, तो इस तर्क में कुछ बल होगा कि धारा 234 को उदारतापूर्वक किसके पक्ष में समझा जाना चाहिए अपीलकर्ता. लेकिन क्या यह धारणा सही है? इस प्रश्न का उत्तर विनियमन के तीन प्रासंगिक प्रावधानों की जांच पर निर्भर करेगा; वे धारा 222(4), 93 और 226 हैं। हम पहले ही देख चुके हैं कि धारा 222(4) में प्रावधान है कि धारा 222(1) के तहत समिति द्वारा वसूली योग्य कोई भी धन ऐसे वसूल किया जाएगा जैसे कि वह संपत्ति पर समिति द्वारा लगाया गया कर हो। और उस पर शुल्क लगाया जाएगा. धारा 93 करधान के विरुद्ध अपील का प्रावधान करती है। धारा 93(1) में अन्य बातों के साथ-साथ कहा गया है कि इस विनियमन के तहत किसी भी कर के मूल्यांकन या आरोपण के खिलाफ अपील उपायुक्त या ऐसे अधिकारी के पास की जाएगी जिसे इस संबंध में राज्य सरकार द्वारा सशक्त किया जा सकता है। धारा 93 की शेष पाँच उपधाराएँ उस तरीके को निर्धारित करती हैं जिसमें अपील की सुनवाई और निपटान किया जाना चाहिए। यदि प्रत्यर्थी 2 द्वारा अपीलकर्ता से वसूली योग्य राशि को वसूली योग्य बना दिया जाता है जैसे कि यह समिति द्वारा लगाया गया कर था, तो ऐसे कर की वसूली के खिलाफ धारा 93(1) के तहत अपील की जा सकती है। श्री चटर्जी का तर्क है कि धारा 93(1) कर लगाने के खिलाफ अपील का प्रावधान करता है, और वह वसूली योग्य बनाई गई राशि और कर के रूप में वसूली योग्य राशि के बीच अंतर करते हैं। उनका तर्क यह है कि जो राशि धारा 222(1) के तहत वसूली योग्य है, इसमें कोई संदेह नहीं है कि इसे काल्पनिक रूप से कर माना जाता है, लेकिन इस प्रकार कर समझी जाने वाली राशि के खिलाफ धारा 93(1) के तहत अपील संभव नहीं होगी। हम इस तर्क से प्रभावित नहीं हैं. यदि धारा 222(4) द्वारा पेश की गई कल्पना के अनुसार विचाराधीन राशि को ऐसा माना जाता है जैसे कि यह एक कर था, तो यह स्पष्ट है कि इस कानूनी कल्पना को पूरा प्रभाव दिया जाना चाहिए; और परिणामस्वरूप, उक्त धारा के परिणामस्वरूप धारा 234 द्वारा निर्धारित पुनर्प्राप्ति प्रक्रिया समिति के लिए उपलब्ध हो जाती है, इसलिए अपीलकर्ता को धारा 93(1) द्वारा निर्धारित अपील करने का अधिकार उपलब्ध हो जाएगा। कल्पना का परिणाम अनिवार्य रूप से यह है कि विचाराधीन राशि को कर के रूप में वसूल किया जा सकता है और अपीलकर्ता को कर की वसूली को चुनौती देने का अधिकार प्राप्त होता है। यह स्थिति s226 द्वारा बिल्कुल स्पष्ट कर दी गई है। यह धारा, अन्य बातों के साथ-साथ यह प्रदान करती है कि जहां धारा 222 में संदर्भित किसी भी प्रकार का कोई भी आदेश अपील के अधीन है, और इसके खिलाफ अपील शुरू की गई है, ऐसे आदेश को लागू करने की सभी कार्यवाही अपील के निर्णय तक निलंबित

कर दी जाएगी, और यदि ऐसे आदेश को अपील पर रद्द कर दिया जाता है, उसकी अवज्ञा को अपराध नहीं माना जाएगा। यह स्पष्ट है कि यह धारा बताती है कि धारा 222 के तहत पारित आदेश अपील योग्य है और यह प्रावधान करता है कि यदि ऐसे आदेश के खिलाफ अपील की जाती है तो आगे की कार्यवाही रोक दी जाएगी। यह सामान्य आधार है कि धारा 222(1) के तहत दिए गए आदेश के खिलाफ अपील के लिए विनियमन में कोई अन्य प्रावधान नहीं है; और इसलिए अनिवार्य रूप से हम धारा 93 पर वापस जाते हैं जो कर लगाने के खिलाफ अपील का प्रावधान करता है। यह तर्क देना बेकार होगा कि हालांकि धारा 226 मानती है कि अपील धारा 222(1) के तहत दिए गए आदेश के खिलाफ है, लेकिन विधायिका ऐसी अपील का प्रावधान करना भूल गई है। इसलिए, हमारी राय में, इसमें कोई संदेह नहीं हो सकता है कि धारा 222, 93 और 226 को एक साथ पढ़ने से यह निष्कर्ष अपरिहार्य है कि धारा 222(1) के तहत संपत्ति के मालिक पर समिति द्वारा की गई मांग के खिलाफ धारा 93(1) के तहत अपील की जा सकती है।)। यदि ऐसा है, तो धारा 234 के उदारवादी निर्माण के समर्थन में दिया गया मुख्य तर्क, यदि एकमात्र नहीं तो, भ्रामक साबित होता है।

अब, धारा 234 को देखने से यह स्पष्ट है कि मजिस्ट्रेट के समक्ष शुरू की गई कार्यवाही वसूली कार्यवाही से अधिक कुछ नहीं है। सभी प्रश्न जो वैध रूप से धारा 153 के तहत दिए गए नोटिस की वैधता या धारा 222 के तहत समिति द्वारा किए गए दावे की वैधता के खिलाफ उठाए जा सकते हैं, धारा 93(1) के तहत अपील में उठाए जा सकते हैं और उठाए जाने चाहिए, और यदि कोई अपील नहीं की जाती है या अपील की जाती है और खारिज कर दी जाती है तो वे सभी बिंदु समाप्त हो जाते हैं और धारा 234 के तहत कार्यवाही में आगे नहीं उठाए जा सकते हैं। इसीलिए धारा 234 द्वारा विचारित जांच की प्रकृति बहुत सीमित है और यह प्रथम दृष्टया न्यायिक जांच के बजाय मंत्रिस्तरीय जांच के चरित्र का हिस्सा है। किसी भी स्थिति में यह मानना कठिन है कि आवेदन पर विचार करने वाला मजिस्ट्रेट एक अवर आपराधिक न्यायालय है। उसके समक्ष किया गया दावा एक कर की वसूली के लिए है और जिस आदेश के लिए प्रार्थना की गई है वह डिफॉल्टर की चल संपत्ति की बिक्री और संकट से कर की वसूली के लिए है। यदि ऐसा है तो यह अधिक से अधिक एक नागरिक प्रकृति की कार्यवाही होगी न कि आपराधिक। इसीलिए, हम सोचते हैं, कार्यवाही का चरित्र जो भी हो, चाहे वह पूरी तरह से मंत्रिस्तरीय या न्यायिक या अर्ध-न्यायिक हो, मजिस्ट्रेट जो आवेदन पर विचार करता है और जांच करता है, वह ऐसा इसलिए करता है क्योंकि वह उस ओर से नामित है और इसलिए वह इसे एक व्यक्तित्व पदनाम के रूप में माना जाना चाहिए, न कि दंड प्रक्रिया संहिता के तहत कार्य करने वाले और अपने अधिकार

का प्रयोग करने वाले मजिस्ट्रेट के रूप में। इसलिए उसे अवर आपराधिक न्यायालय नहीं माना जा सकता। यह उच्च न्यायालय का विचार है और हमें इससे अलग होने का कोई कारण नहीं दिखता। वर्तमान अपील में यह विचार करना अनावश्यक है कि प्रावधान के अनुसार सक्षम सिविल न्यायालय के समक्ष कार्यवाही का चरित्र क्या होगा। प्रथम दृष्टया ऐसी कार्यवाही निष्पादन कार्यवाही से अधिक कुछ नहीं हो सकती।

श्री चटर्जी ने यह तर्क देने का भी प्रयास किया कि प्रत्यर्थी 2 द्वारा अपीलकर्ता के खिलाफ धारा 234 के तहत की गई कार्यवाही अक्षम थी क्योंकि धारा 234 के अनुसार नियम द्वारा निर्धारित तरीके से प्रत्यर्थी 2 द्वारा अपीलकर्ता पर कोई मांग नहीं की गई है। ऐसा प्रतीत होता है कि विनियमन के तहत नियम नहीं बनाए गए हैं और इसलिए धारा 222(1) के तहत मांग करने के लिए कोई फॉर्म निर्धारित नहीं किया गया है। इसलिए तर्क यह है कि, जब तक नियम नहीं बनाए जाते हैं और मांग करने के लिए नोटिस का फॉर्म निर्धारित नहीं किया जाता है धारा 222(1) के तहत यह नहीं कहा जा सकता कि नियमों द्वारा निर्धारित तरीके से कोई मांग की गई है और इसलिए धारा 234 के तहत कोई आवेदन नहीं किया जा सकता है। इस विवाद के दो स्पष्ट उत्तर हैं। पहला उत्तर यह है कि यदि पुनरीक्षण आवेदन किया गया है उच्च न्यायालय के समक्ष अपीलकर्ता अक्षम था, इस प्रश्न को उच्च न्यायालय के समक्ष नहीं उठाया जा सकता था क्योंकि यह मामले की योग्यता का हिस्सा था और इसलिए हमारे समक्ष भी इसे नहीं उठाया जा सकता। जैसे ही यह माना जाता है कि मजिस्ट्रेट कोई नहीं था निचली आपराधिक अदालत में अपीलकर्ता द्वारा उच्च न्यायालय के समक्ष दायर पुनरीक्षण आवेदन को अक्षम माना जाना चाहिए और केवल प्रारंभिक आधार पर खारिज कर दिया जाना चाहिए। इसके अलावा, योग्यता के आधार पर हमें तर्क में कोई सार नहीं दिखता है। यदि नियम निर्धारित नहीं हैं तो यह सब कहा जा सकता है कि डिमांड नोटिस जारी करने के लिए उनका कोई फॉर्म निर्धारित नहीं है; इसका मतलब यह नहीं है कि मांग करने के लिए धारा 222(1) द्वारा समिति को प्रदत्त वैधानिक शक्ति अप्रवर्तनीय है। प्रत्यर्थी 2 द्वारा अपीलकर्ता के विरुद्ध दिए गए नोटिस के परिणामस्वरूप प्रत्यर्थी 2 अपनी लागत के रूप में आवश्यक मरम्मत करने और उक्त लागत की प्रतिपूर्ति की मांग करने का हकदार था। यह विनियमन के प्रासंगिक प्रावधानों का स्पष्ट प्रभाव है; और इसलिए, एक राशि जो धारा 222(1) के आधार पर दावा योग्य थी, सिर्फ इसलिए दावा योग्य नहीं रह जाती क्योंकि उक्त मांग करने के लिए फॉर्म निर्धारित करने वाले नियम नहीं बनाए गए हैं। इसलिए, हमारी राय में, यह तर्क कि धारा 234 के तहत किया गया आवेदन अक्षम था, उसे खारिज कर दिया जाना चाहिए।

अब कुछ निर्णय पर विचार करना बाकी है जिस पर हमारा ध्यान गया है। *म्यूनिसिपल कमेटी, अजमेर बनाम अम्बा लाल* (1) के मामले में, न्यायिक आयुक्त श्री नॉर्मन ने अभिनिर्धारित किया कि एक मजिस्ट्रेट धारा के तहत एक आवेदन पर विचार कर रहा है। विनियम का 234 एक अवर आपराधिक न्यायालय है। इस दृष्टिकोण के समर्थन में दिया गया एकमात्र कारण यह प्रतीत होता है कि जिस मजिस्ट्रेट के समक्ष उक्त धारा के तहत आवेदन किया जाता है, उसे आपराधिक प्रक्रिया संहिता के तहत नियुक्त किया जाता है, और इसलिए वह एक आपराधिक अदालत है, हालांकि वह अपराध से निपट नहीं रहा है। इसीलिए यह अभिनिर्धारित किया गया कि उसे यह तय करने का अधिकार क्षेत्र था कि जिन शर्तों के तहत नगर पालिका मजिस्ट्रेट का सहारा ले सकती है, वे पूरी होती हैं या नहीं। इस निष्कर्ष पर पहुंचने के बाद विद्वान न्यायिक आयुक्त ने माना कि मजिस्ट्रेट के आदेश के खिलाफ एक पुनरीक्षण सक्षम था। हमारी राय में यह निर्णय धारा 234 के तहत कार्यवाही के चरित्र और उन्हें स्वीकार करने वाले मजिस्ट्रेट की स्थिति के संबंध में सही कानूनी स्थिति का सही प्रतिनिधित्व नहीं करता है।

रे दीनबाई जीजीभाई खंबाटा (1) में *बॉम्बे हाई कोर्ट* ने अभिनिर्धारित किया कि *बॉम्बे डिस्ट्रिक्ट म्यूनिसिपैलिटीज एक्ट, 1901* (1901 का *बॉम्बे III*) की धारा 161(2) के तहत एक मजिस्ट्रेट द्वारा दिए गए आदेश को *हाई कोर्ट* द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता धारा 435 के तहत संशोधित किया जा सकता है। यह निर्णय इस आधार पर था कि धारा 161 का पूर्व भाग पूरी तरह से न्यायिक था और यह अभिनिर्धारित किया गया था कि उक्त धारा का उत्तरार्द्ध भाग, हालांकि स्पष्ट रूप से न्यायिक नहीं है, को पूर्व भाग के समान चरित्र का हिस्सा माना जाना चाहिए। इस प्रकार निर्णय धारा 161(2) में निहित प्रावधानों की प्रकृति पर आधारित हो गया।

वी. बी. डी'मोंटे बनाम बांद्रा बरो नगर पालिका (1) में *बॉम्बे हाई कोर्ट* की एक पूर्ण पीठ ने, 1925 के *बॉम्बे म्यूनिसिपल बरो एक्ट XVIII*, अर्थात् धारा 110 के संबंधित प्रावधान से निपटते हुए, अपने पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार का प्रयोग करते हुए यह अभिनिर्धारित किया है कि धारा 110 के तहत उच्च न्यायालय उक्त धारा द्वारा प्रदत्त एक विशेष क्षेत्राधिकार का प्रयोग कर रहा है, न कि आपराधिक प्रक्रिया संहिता की धारा 435 के तहत प्रदत्त क्षेत्राधिकार का। इस निर्णय के अनुसार इस तरह के पुनरीक्षण में उच्च न्यायालय के समक्ष आने वाला मामला दीवानी प्रकृति का है और इसलिए पुनरीक्षण आवेदन उच्च न्यायालय में उसके दीवानी पक्ष पर होगा न कि उसके आपराधिक पक्ष पर। यह महत्वपूर्ण

हैं कि इस मामले में निर्णय *सम्राट बनाम देवप्पा रामप्पा* (1) जिसने विपरीत दृष्टिकोण अपनाया उसका पालन नहीं किया गया।

रे *दलसुखराम हुर्गोवनदास* (2) में बॉम्बे हाई कोर्ट को 1901 के बॉम्बे डिस्ट्रिक्ट म्यूनिसिपल एक्ट III की धारा 86 द्वारा अपेक्षित कार्यवाही की प्रकृति पर विचार करने का अवसर मिला। उक्त धारा के तहत एक मजिस्ट्रेट को उक्त धारा में निर्दिष्ट अपील सुनने का अधिकार है ; और यह अभिनिर्धारित किया गया कि उक्त अपीलों की सुनवाई में मजिस्ट्रेट केवल एक अपीलीय प्राधिकारी है जिसके पास नागरिक दायित्व के प्रश्नों से निपटने का अधिकार क्षेत्र है। इसलिए वह एक अवर आपराधिक अदालत नहीं है और इस तरह उसके आदेश आपराधिक प्रक्रिया संहिता की धारा 435 के तहत उच्च न्यायालय के पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार के अधीन नहीं हैं।

मध्य भारत उच्च न्यायालय को *नगर पालिका समिति, लश्कर बनाम शहाबुद्दीन* (3) में ग्वालियर नगर अधिनियम (1993 श्रीमती) की धारा 153 के तहत एक समान प्रश्न पर विचार करने का अवसर मिला था। उक्त धारा के अंतर्गत नगर पालिका द्वारा दोषी व्यक्ति से कार्य की लागत वसूल करने हेतु आवेदन किया जा सकता है। यह अभिनिर्धारित किया गया कि उक्त कार्यवाही में पारित आदेश को उच्च न्यायालय द्वारा धारा 435 के तहत संशोधित नहीं किया जा सकता क्योंकि आदेश एक प्रशासनिक आदेश है और इसमें कोई संदेह नहीं है कि मजिस्ट्रेट एक अवर आपराधिक न्यायालय नहीं था।

मिथन मुसम्मत बनाम म्यूनिसिपल बोर्ड ऑफ आगरा एवं अन्य (4) में, इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि संयुक्त प्रांत नगर पालिका अधिनियम, 1926 की धारा 247(1) के तहत एक आदेश पारित करने वाला एक मजिस्ट्रेट एक अवर आपराधिक अदालत के रूप में ऐसा नहीं करता है। दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 435 का अर्थ *माधो राम बनाम रेक्स* (5) में इलाहाबाद उच्च न्यायालय का निर्णय भी इसी आशय का है।

हमने इन निर्णयों का उल्लेख केवल यह दर्शाने के लिए किया है कि नगरपालिका कानून के तहत समान प्रावधानों से निपटने में विभिन्न उच्च न्यायालयों ने यह विचार किया है कि उचित वैधानिक प्रावधान के तहत वसूली कार्यवाही का मनोरंजन करने वाले मजिस्ट्रेट आपराधिक प्रक्रिया संहिता के तहत अवर आपराधिक अदालतें नहीं हैं। यद्यपि हमने इन निर्णयों का उल्लेख किया है, हम यह स्पष्ट करना चाहते हैं कि हमें विभिन्न उच्च न्यायालयों द्वारा उनके समक्ष उठाए गए प्रश्नों के संबंध में लिए गए विचारों की सत्यता या अन्यथा के बारे में कोई राय व्यक्त नहीं करनी चाहिए।

परिणाम यह है कि अपील विफल हो जाती है और खारिज की जाती है।

अपील खारिज.

चंद्रकांत शुक्ल की देखरेख में शशिप्रभा द्वारा अनुवादित।